भारत संघ व अन्य

बनाम

तरसेम सिंह

(सिविल अपील नं. 5151-52/2008)

13 अगस्त, 2008

(आर.वी रविन्द्रन और लोकेश्वरसिंह पंता, जेजे.)

सर्विस कानून:

सेना- विकलांगता पेंशन की मांग करने में देरी- उच्च न्यायालय की एकल पीठ द्वारा 38 महीने के बकाया के साथ मांग को मंजूर किया-खंडपीठ ने 16 वर्षों के लिए 6% ब्याज के साथ बकाया राशि मंजूर की। अभिनिर्धारित: जहां सेवा से संबंधित मांग लगातार गलती होने पर आधारित है, राहत दी जा सकती है, भले ही उक्त उपचार की मांग लंबे समय बाद की गई हो, बशर्ते की आदेश किसी अन्य को प्रभावित न करे- जहां तक बकाया की वसूली का परिणामिक उपचार का संबंध है, बार-बार होने वाली/लगातार होने वाली गलतियों से संबंधित सिद्धान्त लागू होगे और उच्च न्यायालय बकाया से संबंधित राहत को रिट याचिका दायर करने की तारीख से तीन साल पहले की अवधि तक सीमित कर सकेगा- वर्तमान मामले में 16 साल की देरी परिणामिक उपचार को प्रभावित करेगी- उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा 16 वर्षों के लिए बकाया राशि के भुगतान का निर्देश देना उचित नहीं था और वह भी ब्याज के साथ- उच्च न्यायालय की खंडपीठ का आदेश रद्द- विलंब- ब्याज- अपकृत्य।

सेवा कानून से संबंधित निरंतर गलत और आवर्ती/लगातार गलती की अवधारणा को- समझाया गया।

बालाकृष्णन एस.पी. वाघमारे बनाम श्री ध्यानेश्वर महाराज संथान 1959 (2) सप्ली. एससीआर 476=एआईआर 1959 एससी 798 एम.आर. गुप्ता बनाम भारत संघ 1995 (2) सप्ली.एससीआर 852=1995(5) एससीसी 628 और शिवदास बनाम भारत संघ 2007 (1) एसीआर 1127 =2007 (9) एससीसी 274- पर निर्भर था।

मामला कानून संदर्भ

1959 (2) सप्ली. एससीआर 476	भरोसा किया	पैरा 4
1995 (2) सप्ली. एससीआर 852	भरोसा किया	पैरा 4
2007 (1) एससीआर 1127	भरोसा किया	पैरा 4

सिविल अपील अधिकारिता: सिविल अपील संख्या 5151-5152/2008।

पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय एट चंडीगढ के एल.पी.ए. सं. 573/2002 की सी.एम. सं. 99 और 2207 में अंतिम निर्णय एवं आदेश दिनांक 6.12.2006 और 23.2.2007 से।

बी दत्ता एएसजी., अशोक के. श्रीवास्तव और बी. कृष्णा प्रसाद अपीलार्थी के लिए।

नीरज के जैन और उग्रशंकर प्रसाद प्रत्यर्थी के लिए।

1. न्यायालय का आदेश आर.वी. रविन्द्रन द्वारा दिया गया- अनुमति दी गई। पक्षकारों के अधिवक्ता को सुना गया।

2. भारतीय सेना में काम करते समय अयाची को 13.11.1983 को मेडिकल केटेगरी के आधार पर सेना सेवा से पृथक कर दिया गया। उन्होने 1999 में उच्च न्यायालय में दरवाजा खटखटाया और अपीलार्थीयों ने विकलांगता पेंशन का भुगतान करने का निर्देश देने की मांग की। विद्वान एकल न्यायाधीश ने दिनांक 6.12.2000 के आदेश द्वारा रिट याचिका को स्वीकार कर लिया और अपीलार्थीयों को अनुमेय दरों पर विकलांगता पेंशन देने का निर्देश दिया। बकाया के संबंध में, अनुतोष रिट याचिका दायर करने से 38 महीने पहले तक सीमित था। अयाची को यह भी निर्देश दिया गया कि अपीलार्थीयों द्वारा जब भी बुलाया जाए है तब वह पुनः जांच हेतु मेडिकल बोर्ड के समक्ष उपस्थित होंगे। अपीलार्थीयों ने उक्त निर्णय का विरोध नहीं किया और प्रतिवादियों को विकलांगता पेंशन प्रदान की गई और 38 महीने के लिए विकलांगता पेंशन का बकाया भी जारी किया गया।

3. हालांकि अयाची संतुष्ट नही था। उसके अनुसार विकलांगता पेंशन का भुगतान देय दिनांक 13.11.1983 से किया जाना चाहिए। इसलिए उसने एक लेटर्स पेटेन्ट की अपील दायर की। उक्त अपील को उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिनांक 6.12.2006 के फैसले द्वारा स्वीकार किया गया। डिवीजन बेंच ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी देय तिथि से विकलांगता पेंशन पाने का हकदार है और इसे रिट याचिका दायर करने से पहले तीन साल और दो महीने की अवधि तक सीमित नहीं किया जाना चाहिए। एक आगामी संशोधन आदेश दिनांक 23.2.2007 द्वारा डिवीजन बेंच ने बकाया पर 6% प्रति वर्ष की दर से ब्याज भी दिया। इस अपील में डिवीजन बेंच के उक्त फैसले

को चुनौती दी गई है। इसलिए हमारे विचार के लिए एकमात्र प्रश्न यह उठता है कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा बकाया भुगतान को तीन साल तक सीमित करने के बजाए 16 साल की अवधि के लिए भुगतान करने का निर्देश देना उचित है।

4. निरंतर गलतियों और पुनरावृति/क्रमिक गलतियों के अंतर्निहित सिद्धांतों को सेवा कानून में लागू किया गया है। 'एक निरंतर गलत' का तात्पर्य एक गलत कार्य जो निरंतर क्षति का कारण बनता है। आवर्ती/क्रमिक गलतियां वे है जो समय-समय पर होती है। प्रत्येक गलत कार्य एक अलग और पृथक वाद हेतुक को जन्म देता। इस न्यायालय ने बालाकृष्णन एस.पी. वाघमारे बनाम श्री ध्यानेश्वर महाराज संस्थान (AIR 1959 SC 798) में निरंतर गलती के सिद्धान्त की व्याख्या की है।(परिसीमा अधिनियम 1908 की धारा 23 के संदर्भ में परिसीमा अधिनियम 1963 की धारा 2)

> "निरंतर गलती के लिए यह आवश्यक है कि कार्य जो क्षति का एक निरंतर स्रोत बनाता है और उक्त क्षति के जारी रहने के लिए कार्य करने वाले को ऐसा जिम्मेदार और उत्तरदायी बनाता है। यदि किसी गलत कार्य से संपूर्ण रूप से एक क्षति होती है तो वह निरंतर गलती की श्रेणी में नहीं आती है, भले ही उक्त कार्य से होने वाली क्षति निरंतर जारी है। हालांकि, यदि कोई गलत कार्य इस तरह का है कि उसके कारण होने वाली क्षति जारी रहती है, तो वह कार्य एक निरंतर गलत की श्रेणी में है। इस संबंध में, गलत कार्य से होने वाली क्षति और उक्त क्षति का क्या प्रभाव हो सकता है, इसके बीच अंतर वर्णित करना आवश्यक है।"

एम.आर. गुप्ता बनाम भारत संघ (1995 (5) एस.सी.सी. 628) में, अपीलार्थी ने 1989 में 1.8.1989 से प्रभावी अपने प्रारंभिक वेतन निर्धारण के संबंध में एक शिकायत के साथ उच्च न्यायालय का रूख किया। मांग को खारिज कर दिया गया क्योंकि यह 11 साल बाद की गई थी। इस न्यायालय ने गलती को जारी रखने और गलतियों को बार-बार दोहराने के सिद्धांतों को लागू किया और निर्णय को उलट दिया। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

> "अपीलार्थी की शिकायत थी कि उसका वेतन निर्धारण नियमों के अनुसार नहीं था। उसके खिलाफ लगातार गलती करने का दावा था जिसने हर बार आवर्ती वाद हेतुक को जन्म दिया जब-जब उसे वेतन का भुगतान किया गया जिसकी गणना नियमों के अनुसार नहीं की गई थी। जब तक अपीलकर्ता सेवा में है तब-तब हर महीने नया वाद हेतुक का जन्म होता है। जब-जब उसे नियमों के विपरीत गलत गणना के आधार पर मासिक वेतन का भुगतान किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि अपीलकर्ता का दावा गुण-दोष के आधार पर सही पाया जाता है, तो वह भविष्य में उचित रूप से निर्धारित वेतनमान के अनुसार भुगतान पाने का हकदार होगा और पिछली अवधि के बकाया की वसूली के लिए परिसीमा का प्रश्न उठेगा। दूसरे शब्दों में, वेतन में अंतर के आधार पर गणना की गई बकाया राशि की वसूली के लिए अपीलकर्ता का दावा, यदि कोई हो जो कालबाधित हो गया है, वसूली योग्य नहीं होगा, लेकिन वह निमयों के अनुसार अपने वेतन के उचित निर्धारण का हकदार होगा। यदि गुण-दोष के आधार पर उसका दावा उचित है, तो जारी गलती को समाप्त किया

जाए। इसी प्रकार, उसके द्वारा दावा किया गया कोई अन्य परिणामिक राहत, जैसे पदोन्नति आदि, भी उसे उन राहतों से वंचित करने के लिए लैचेस आदि से बाधित होगा। वेतन निर्धारण केवल 1.8.1978 को मौजूदा स्थिति के आधार पर किया जा सकता है, बिना किसी अन्य परिणामिक उपचार को ध्यान में रखे, जो कि उसकी लापरवाही और परिसीमा की बाधा से बाधित हो सकती है। उचित वेतन निर्धारण की सीमा तक आवेदन को कालबाधित नहीं माना जा सकता।"

शिवदास बनाम भारत संघ- 2007 (9) एससीसी 274 में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि:

"उच्च न्यायालय आम तौर पर असाधारण उपचार के लिए देर से सहारा लेने की अनुमति नहीं देता है क्योंकि इससे भ्रम और सार्वजनिक असुविधा होने की संभावना होती है और इससे नए अन्याय होने की संभावना है, और यदि अनुचित देरी के बाद रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग किया जाता है तो इसका प्रभाव न केवल कठिनाई और असुविधा बल्कि तीसरे पक्ष पर अन्याय भी हो सकता है। यह इंगित किया गया था कि जब रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग किया जाता है, तब असाधारण देरी तीसरे पक्ष के अधिकारों के सृजन के साथ एक महत्वपूर्ण कारक है तब इस तरह के क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने या न करने का निर्णय लेने का क्षेत्राधिकार उच्च न्यायालय पर निर्भर करता है।

पेंशन के मामले में वादहेतुक वास्तव में महीने दर महीने जारी रहता है। हालांकि यह याचिका दायर करने में देरी को नजरअंदाज करने का आधार नहीं हो सकता है......यदि याचिका उचित अवधि मे पेश की जाए सामान्यतः तीन साल से अधिक समय बाद दायर की जाती है तो अदालत उसे अस्वीकार कर देगी या उपचार को सीमित कर देगा जो लगभग तीन साल की उचित अवधि के लिए दी जा सकती है।"

5. संक्षेप में कहे तो सामान्यतः सेवा से संबंधित मांग को विलंब और विलंब के आधार पर खारिज कर दिया जाएगा (जहां उपचार की मांग एक रिट याचिका दायर करके की जाती है) या परिसीमा (जहां प्रशासनिक न्यायाधिकरण को एक आवेदन द्वारा उपचार की मांग की जाती है)। उक्त नियम के अपवादों में से एक अपकृत्य जारी रहने से संबंधित मामला है। जहां सेवा संबंधी मांग अपकृत्य जारी रहने पर आधारित है, वहां सुधार की मांग करने में देरी होने पर भी राहत दी जा सकती है। उस तारीख के संदर्भ में जिस पर निरंतर अपकृत्य शुरू हो गया, ऐसी जारी अपकृत्य निरंतर क्षति का स्रोत बनती है लेकिन अपवाद भी है। यदि शिकायत किसी आदेश या प्रशानसिक निर्णय के संबंध में है जो कई व्यक्तियों से संबंधित है या प्रभावित है और यदि विवाद को फिर से खोलने से तीसरे पक्ष के स्थापित अधिकार प्रभावित होंगे तो उस पर विचार नहीं किया जायेगा। उदाहरण के लिए यदि मुद्दा पेंशन के भुगतान या पुर्ननिर्धारण से संबंधित है, तो इसके बावजूद राहत दी जा सकती है क्योंकि इससे तीसरे पक्ष के अधिकार प्रभावित नहीं होते है। लेकिन यदि मांग वरिष्ठता या पदोन्नति आदि से संबंधित है, जो दूसरों को प्रभावित करता है तो मांग पुरानी हो जाएगी और लेचेस/परिसीमा का सिद्धान्त लागू किया जाएगा। जहां तक पिछली अवधि की बकाया राशि के परिणामिक उपचार का सवाल है, क्रमिक गलतियों की वसूली से संबंधित सिद्धान्त लागू होंगे। परिणाम स्वरूप,

उच्च न्यायालयों सामान्य रूप से बकाया से संबंधित परिणामिक उपचार को रिट दाखिल करने की तारीख से तीन साल की अवधि तक सीमित कर देगा।

6. इस मामले में 16 साल की देरी बकाया के लिए परिणामिक मांग को प्रभावित करेगी। उच्च न्यायालय द्वारा 16 वर्ष के बकाया के ब्याज के साथ भुगतान के संबंध में निर्देश दिया जाना उचित नहीं था। इसके बकाया राशि से संबंधित उपचार को रिट याचिका की तारीख से केवल तीन साल पहले, या मांग की तारीख से लेकर रिट याचिका की तारीख तक, जो भी कम हो, तक सीमित रखना चाहिए था। ऐसी परिस्थितियों में बकाया पर ब्याज नहीं देना चाहिए था।

7. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, ये अपीलें स्वीकार की जाती है। खंडपीठ के उस आदेश को रद्द किया जाता है जिसमें विकलांगता पेंशन का भुगतान देय तिथि से करने का निर्देश दिया गया था। इसके परिणामस्वरूप विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को बहाल किया जाता है।

अपीलें स्वीकार की जाती हैं।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' के जरिए अनुवादक न्यायाधिकारी रेखा भार्गव आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय वादी के प्रतिबंधित उपयोग के लिए उसकी भाषा में समझाने के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।